गृह नीति

प्रेमचंद

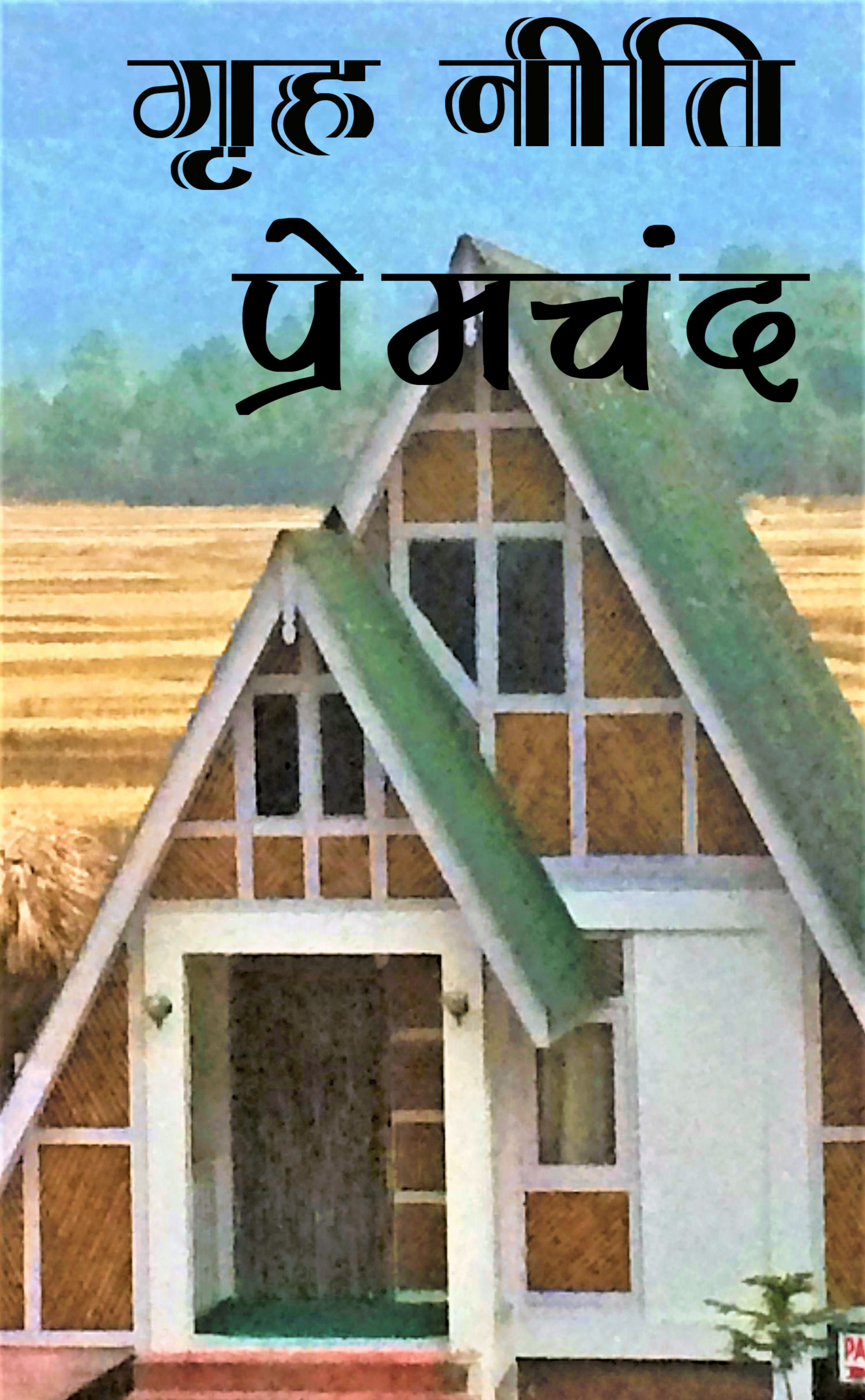

गृह-नीति

प्रेमचंद

गृह-नीति

जब माँ, बेटे से बहू की शिकायतों का दफ्तर खोल देती है और यह सिलसिला किसी तरह खत्म होते नजर नहीं आता, तो बेटा उकता जाता है और दिन-भर की थकान के कारण कुछ झुँझलाकर माँ से कहता है,
'तो आखिर तुम मुझसे क्या करने को कहती हो अम्माँ ? मेरा काम स्त्री को शिक्षा देना तो नहीं है। यह तो तुम्हारा काम है ! तुम उसे डाँटो, मारो,जो सजा चाहे दो। मेरे लिए इससे ज्यादा खुशी की और क्या बात हो सकती है कि तुम्हारे प्रयत्न से वह आदमी बन जाय ? मुझसे मत कहो कि उसे सलीका नहीं है, तमीज नहीं है, बे-अदब है। उसे डाँटकर सिखाओ।'
माँ -'वाह, मुँह से बात निकालने नहीं देती, डाटूँ तो मुझे ही नोच खाय। उसके सामने अपनी आबरू बचाती फिरती हूँ, कि किसी के मुँह पर मुझे कोई अनुचित शब्द न कह बैठे। बेटा तो फिर इसमें मेरी क्या खता है ? 'मैं तो उसे सिखा नहीं देता कि तुमसे बे-अदबी करे !'
माँ-'तो और कौन सिखाता है ?'

बेटा -'तुम तो अन्धेर करती हो अम्माँ !'

माँ -'अन्धेर नहीं करती, सत्य कहती हूँ। तुम्हारी ही शह पाकर उसका दिमाग बढ़ गया है। जब वह तुम्हारे पास जाकर टेसुवे बहाने लगती है, तो कभी तुमने उसे डाँटा, कभी समझाया कि तुझे अम्माँ का अदब करना चाहिए ? तुम तो खुद उसके गुलाम हो गये हो। वह भी समझती है, मेरा पति कमाता है, फिर मैं क्यों न रानी बनूँ, क्यों किसी से दबूँ ? मर्द जब तक शह न दे, औरत का इतना गुर्दा हो ही नहीं सकता।'

बेटा -'तो क्या मैं उससे कह दूं कि मैं कुछ नहीं कमाता, बिलकुल निखट्टू हूँ ? क्या तुम समझती हो, तब वह मुझे जलील न समझेगी ? हर एक पुरुष चाहता है कि उसकी स्त्री उसे कमाऊ, योग्य, तेजस्वी समझे और सामान्यत: वह जितना है, उससे बढ़कर अपने को दिखाता है। मैंने कभी नादानी नहीं की, कभी स्त्री के सामने डींग नहीं मारी; लेकिन स्त्री की दृष्टि में अपना सम्मान खोना तो कोई भी न चाहेगा।'

माँ -'तुम कान लगाकर, ध्यान देकर और मीठी मुस्कराहट के साथ उसकी बातें सुनोगे, तो वह क्यों न शेर होगी ? तुम खुद चाहते हो कि स्त्री के हाथों मेरा अपमान कराओ। मालूम नहीं, मेरे किन पापों का तुम मुझे यह दंड दे रहे हो। किन अरमानों से, कैसे-कैसे कष्ट झेलकर, मैंने तुम्हें पाला। खुद नहीं पहना, तुम्हें पहनाया; खुद नहीं खाया, तुम्हें खिलाया। मेरे लिए तुम उस मरनेवाली की निशानी थे और मेरी सारी अभिलाषाओं का केन्द्र। तुम्हारी शिक्षा पर मैंने अपने हजारों के आभूषण होम कर दिये। विधवा के पास दूसरी कौन-सी निधि थी ? इसका तुम मुझे यह पुरस्कार दे रहे हो?'

बेटा -'मेरी समझ में नहीं आता कि आप मुझसे चाहती क्या हैं ? आपके उपकारों को मैं कब मेट सकता हूँ ? आपने मुझे केवल शिक्षा ही नहीं दिलायी, मुझे जीवन-दान दिया, मेरी सृष्टि की। अपने गहने ही नहीं होम किये, अपना रक्त तक पिलाया। अगर मैं सौ बार अवतार लूँ, तो भी इसका बदला नहीं चुका सकता। मैं अपनी जान में आपकी इच्छा के विरुद्ध कोई काम नहीं करता, यथासाधय आपकी सेवा में कोई बात उठा नहीं रखता; जो कुछ पाता हूँ, लाकर आपके हाथों पर रख देता हूँ; और मुझसे क्या चाहती हैं? और मैं कर ही क्या सकता हूँ ? ईश्वर ने हमें तथा आपको और सारे संसार को पैदा किया। उसका हम उसे क्या बदला देते हैं ? क्या बदला दे सकते हैं ? उसका नाम भी तो नहीं लेते। उसका यश भी तो नहीं गाते। इससे क्या उसके उपकारों का भार कुछ कम हो जाता है ? माँ के बलिदानों का प्रतिशोध कोई बेटा नहीं कर सकता, चाहे वह भू-मण्डल का स्वामी ही क्यों न हो। ज्यादा-से-ज्यादा मैं आपकी दिलजोई ही तो कर सकता हूँ और मुझे याद नहीं